International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 1; Issue 7; July 2016; Page No. 63-66

दया प्रकाश सिन्हा कृत 'इतिहास' नाटक के बहाने भारतीय स्वतन्त्रता संघर्ष की पड़ताल

[1] डॉ० दर्शन पाण्डेय, [2] डॉ० गीता पाण्डेय

[1] सहायक प्रोफेसर, शिवाजी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत।
[2] सहायक प्रोफेसर, मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

इतिहास हमारे अतीत का प्रामाणिक वृत्त होता है, जो आज है वह कल इतिहास का रूप धारण कर लेता है। जहाँ यह हमारे अतीत से अवगत कराता है, वहीं अतीत से प्रेरणा लेने की सीख भी देता है। जब कोई रचनाकार इतिहास के प्रसंग को अपनी कृति का मुख्य विषय बनाता है तो वह अपनी रचनात्मक शक्ति और कौशल से इतिहास को भी समसामायिक बना देता है। इसी रचनात्मक कौशल का परिचय हमें दया प्रकाश सिन्हा के 'इतिहास' नाटक में मिलता है। इस नाटक में नाटककार की दृष्टि इतिहास के प्रति यथार्थवादी और सत्य पर आधारित रही है। नाटक की भूमिका में नाटककार ने यह स्पष्ट किया है कि, "उनका सत्य पर आग्रह अधिक रहा है और इस नाटक में उन्होंने सत्य को ही प्रस्तुत किया है।" [1] वास्तव में इतिहास नाटक के द्वारा नाटककार ने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को प्रस्तुत किया है, सन् 1857 से लेकर 1947 तक स्वतंत्रता आंदोलन के प्रत्येक छोटे-बड़े संघर्ष को नाटक में दर्शाया गया है। दया प्रकाश सिन्हा ने स्वतंत्रता संघर्ष की प्रत्येक घटना को यथार्थवादी और सत्यवादिता के साथ प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत नाटक में सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से लेकर सन् 1947 के विभाजन की त्रासदी तक के 90 वर्ष के घटना चक्र को नाटक में चित्रित किया है। नाटककार ने इतिहास नाटक में तथ्यात्मकता पर विशेष सतर्कता बरती है, प्रत्येक घटना को उन्होंने सप्रमाण प्रस्तुत किया है। जिसमें लेशमात्र भी कल्पना का समावेश नहीं किया है। यह नाटक विशुद्ध सत्य को दर्शकों के समक्ष रखता है, इसलिए डॉ० कुसुम कुमार ने इसे साफ सुथरा शिलालेख कहा है, वे कहती हैं- "इतिहास नाटक स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उभरे और स्थापित हुए नायकों, उप-नायकों की परस्पर जीवन दृष्टि, जीवन-शैली, चिंतन, मान्यताओं, कमजोरियों, मतभेदों को रूबरू सबके समक्ष रखता है। यह रक्खा जाना और रक्खे जाने की टकराहट तथा ऊहापोह से लेखक की ईमानदारी ज्ञात होती है। एक बड़ी सांस्कृतिक सूझ-बूझ तथा कलात्मकता से लिखा गया। यह नाटक सिन्हा जी की सर्वाधिक प्रबुद्ध रचना है।" [2]

नाटक के कथ्य का प्रारंभ सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से आरंभ होता है, जिसमें मंगल पांडे को मुख्य भूमिका में दर्शाया गया है। मंगल पांडे के विद्रोह की घटना इतिहास प्रसिद्ध है, धीरे- धीरे अंग्रेजी कंपनी की नीतियों के विरुद्ध आम सैनिकों में विद्रोह की भावना और ज्वाला फैल रही थी, सैनिकों का यह विद्रोह महाराष्ट्र, मेरठ, पंजाब आदि सभी स्थानों पर दिखाई दिया, जहाँ सैनिकों ने अपने अफसरों का आदेश मानने से मना कर दिया।

"कमांडर: बहरा! सुनता है? अटेंशन (सिपाही हिलते नहीं)
कमांडर: अटेंशन
सिपाही 1- हम चरबी वाले कारतूस मुंह से नहीं काटेंगे। इसमें गाय की चर्बी है।
सिपाही 2- इसमें सुअर की चर्बी है।
सिपाही 3- हमने कंपनी को अपना धरम नहीं बेचा।
सिपाही 2- हम अपने धरम के लिए जान पर खेल जाएंगे।
कमांडर: शट अप, यू बास्टर्ड।" [3]

भारतवर्ष में सदैव भी धर्म को विशेष स्थान दिया गया है, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का मूल भी धर्म ही रहा है, अंग्रेजी सरकार ने युद्ध के लिए जिन नई इल्फील्ड राइफलों का प्रयोग किया उसके विषय में कहा गया, "नई राइफल में प्रयोग होने वाले कारतूसों को राइफल में भरने से पहले दांत से खींचकर खोलना पड़ता था। इसमें ग्रीस लगी होती थी। वह गाय और सूअर की चर्बी से बनती थी। सिपाहियों की धार्मिक भावनाओं को इससे ठेस पहुंची। उन्हें लगा उनका धर्म खतरे में है।"[4] लेकिन ऐसा नहीं था कि केवल भारतीय सैनिकों ने धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर आदेश मानने से इनकार किया था, इसके पीछे अंग्रेजों द्वारा किया गया उपेक्षापूर्ण व्यवहार भी था। वह अंग्रेजी सैनिकों को जितना वेतन देते थे उसका आधा भी भारतीय सैनिकों को नहीं मिलता था, साथ ही अंग्रेजों द्वारा जो भी नीति, कानून, अत्याचार भारतीय मानस पर करती थी उससे सीधे सैनिक ही प्रभावित होता था, क्योंकि वह भारत के दूर-दराज इलाकों से जुड़ा हुआ था। भारतीय जनता और राजे-रजवाड़ों में भी असंतोष के भाव उभर रहे थे। मुगल शासन काल बादशाह भी पेंशन पर जीवन बसर कर रहे थे। जब सैनिकों का विद्रोह हुआ तो उन्हें सभी ओर से सहायता मिली। इस विद्रोह के कर्णधार अलग-अलग क्षेत्रों से अलग-अलग लोग रहे। जिसमें झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, बाबू कुंवर सिंह, बेगम हजरत महल, नाना साहब आदि सभी ने अपने-अपने क्षेत्रों में 1857 के विद्रोह का सूत्रपात किया। लेकिन इस विद्रोह को अंग्रेजों ने कुचल दिया, विद्रोही नेताओं को फांसी दी गई। झांसी की रानी और कुंवर सिंह वीरगति को प्राप्त हुए। यह एक प्रामाणिक अनुमान है कि यदि 1857 का विद्रोह एक ही दिन पूरे देश में एक साथ होता तो परिणाम कुछ और होता। भिन्न स्थानों पर यह क्रांति क्रमबद्ध रूप में उभरी, जिससे अंग्रेजी अफसर सतर्क हो गए तथा उन्होंने संवेदनशील क्षेत्रों में विद्रोह को भड़कने से पहले ही दबा दिया। यद्यपि अंग्रेज अफसरों के विद्रोह दबा देने से विद्रोह समाप्त नहीं हुआ बल्कि धीमे स्वर में आगे भी चलता रहा। महाराष्ट्र में वासुदेव बलवंत फड़के इसी विद्रोह का दूसरा नाम था, जिसने अंग्रेज अफसरों की नाक में दम कर रखा था। नाटककार ने बड़े ही प्रभावशाली ढंग से इस प्रसंग को नाटक में उठाया है। इस घटना के तथ्य इतिहास में जिस प्रकार मिलते हैं, उसी रुप में नाटककार ने भी ग्रहण किए हैं। "महाराष्ट्र में वासुदेव बलवंत फडके का उदय एक अनोखी घटना थी, जिसने बुद्धिजीवियों के सचेत राष्ट्रवाद और जन-सामान्य की जुझारू राष्ट्रीयता के बीच थोड़े समय के लिए सामंजस्य स्थापित किया था..... पुलिस में छिपकर एक मंदिर में शरण लेते समय उन्होंने आत्मकथा लिखी थी। जिसमें वह बताते हैं कि किस प्रकार उनके मन में गुप्त-दल बनाकर, डकैतियों के माध्यम से धन जमा करके और संचार व्यवस्था को अस्त-व्यस्त करके सशस्त्र विद्रोह कराने और पुनः हिंदू राष्ट्र स्थापित करने की बात आई थी।" [5]

इसी प्रकार की अभिव्यक्ति नाटककार ने 'इतिहास' नाटक में की है कि फड़के ने शिवाजी की भांति छापेमारी युद्ध की शैली से अंग्रेजों की नींद हराम कर रखी थी। गवर्नर ने वासुदेव बलवंत फडके को पकड़ने के लिए पाँच हज़ार का इनाम वाला पोस्टर चिपकवाया जिसके प्रत्युत्तर में फडके ने भी एक पोस्टर चिपकवा दिया-

"सिपाही- यह पोस्टर किसने चिपकाया? (पोस्टर पढ़ते हुए) जो गवर्नर सर रिचर्ड्स टेंपल का सिर लाकर मुझे देगा उसे मैं पचास हज़ार दूंगा। वासुदेव बलवंत फडके, बाप रे बाप। यह पोस्टर तो फड़के ने निकलवाया है (खड़े लोगों से) इसे किसने चिपकाया?

गवर्नर- ओह जीसस। वह मेरे सर के लिए पचास हज़ार ऑफर कर रहा है। ओह माय गॉड। पचास हज़ार के लिए कोई भी डर्टी नेटिव मेरी गर्दन काट सकता है। ओह नो (गर्दन पर हाथ फेरते हुए) ओह नो (उठाकर शॉल अपनी गर्दन के चारों ओर लपेट लेता है)" [6]

परंतु अंग्रेजों ने बाद में फड़के को गिरफ्तार कर लिया और आजीवन कारावास में डाल दिया जहाँ उनकी मृत्यु हो गई। इसी प्रकार अनेक छोटे-बड़े विद्रोह देश में चलते रहे, जिनमें पंजाब का कूका आंदोलन प्रमुख है, जो 18 57 में हुआ, इसका संचालन बाबा राम सिंह ने किया। 18 57 के विद्रोह के बाद भारत पर ईस्ट इंडिया कंपनी का भी आधिपत्य समाप्त कर इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया का शासन स्थापित हो गया। अब अंग्रेजों ने फिर से भारत में जड़ें जमा लीं। अंग्रेजी सरकार ने देश में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए इससे पूर्व सन् 1800 में कोलकाता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की, जिसके पीछे उनका उद्देश्य देश में ज्ञान का प्रचार-प्रसार करना नहीं था बल्कि देशी शरीर में विदेशी मानसिकता वाले लोगों की जमात तैयार करना था, जो उनके काम को आसान कर सके। इस शिक्षा प्रसार ने जहाँ अंग्रेजो को उनके राजकाज में मदद की, वहीं भारत में जन-जागरण की लहर उत्पन्न की।

ब्रिटिश सरकार के कारण भारत में आधुनिक शिक्षा का प्रचार प्रसार हुआ, जिससे एक शिक्षित वर्ग का उदय हुआ, जो शिक्षा ग्रहण करने विदेश भी जाते थे। अंग्रेजी वहां संपर्क भाषा का काम करने लगी। शिक्षा के प्रभाव से समाचार पत्रों का भी आरंभ हुआ, लोग एक दूसरे के विचारों से अवगत हुए और नव-चेतना के इन विचारों को समाज में फैलाने का प्रयास भी किया गया। शिक्षित वर्ग के उदय होने से वह अपने अधिकारों के प्रति जागरुक हुआ, वह सरकार के अनुचित कार्य और अत्याचारों को इंगित करने लगा, जिसके फलस्वरूप राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। कांग्रेस की स्थापना को देशभक्तों ने 'सुरक्षा वाल्व' का नाम दिया। इसकी चर्चा इतिहास ग्रंथों में भी मिलती है। कुछेक में इसे भारतीय मानस का राजनीतिक विकास कहा गया। सर्वप्रथम 'सुरक्षा वाल्व' का प्रश्न लाला लाजपत राय ने उठाया था। उनका विचार था कि- "यह संस्था इसलिए बनी कि वह अंग्रेजी राज की रक्षा हेतु अभय कपाट (सेफ्टी वाल्व) के रूप में कार्य कर सके।" [7] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हमने कांग्रेस की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नाटककार ने इस नाटक की प्रत्येक घटना को उसकी तथ्यात्मकता से उभारा है और कांग्रेस के प्रसंग में उन्होंने डॉ० पट्टाभि सीतारामैया की 'हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया' और आर० के० बोम्बल की 'इंडियन पॉलिटिक्स एंड गवर्नमेंट पुस्तकों से इस प्रसंग के संकेत ग्रहण किए हैं। अंग्रेज सरकार ने 1857 के विद्रोह की पुनरावृत्ति रोकने के लिए कांग्रेस की स्थापना की और कांग्रेस के लिए सुरक्षा वाल्ब के रूप में भी कार्य करती रही-

"ह्यूम- इंग्लिश एजुकेशन से नेटिव सोचने लगा है। उसका माइंड डेवलप हो गया है वह अपना फैसला खुद लेने लगा।

डफरिन- ठीक कहते हो। सुरेंद्र नाथ बैनर्जी ने कोलकाता में इंडियन नेशनल कॉन्फ्रेंस बनाई।

ह्यूम- अगर सुरेंद्रनाथ बैनर्जी और उसके बंगाली दोस्तों पर निगाह नहीं रखी गई तो एक वक्त आएगा जब वह हमारे खिलाफ ही आंदोलन चलाने लगेंगे इसलिए जरूरी है इन इंग्लिश एजुकेटेड इंडियंस के एसोसिएशन्स को हम अंग्रेज खुद सपोर्ट करें और गाइड करें।

डफरिन- ओह कम ऑन मिस्टर ह्यूम। यू वांट अस टू ज्वाइन द नेटिव्ज?

हयूम- हिन्दुस्तानियों को आजाद होने से हम रोक नहीं पाएंगे एक ना एक दिन वह आजाद हो जाएँगे। वह दो तरीकों से आजाद हो सकते हैं, एक वह अपनी आजादी हमसे छीन लें। दूसरे हमारे जरिए चलाए कॉन्स्टिट्यूशन रिफार्म से। इसके लिए हमें नेटिव्ज़ को यूरोपियन सुधारों के रास्ते पर आगे बढ़ना होगा। नेटिव्ज की राजनीतिक शिक्षा के काम में समय लगेगा लेकिन जब तक यह शिक्षा चलेगी तब तक हम अंग्रेज बिल्कुल सुरक्षित रहेंगे। नेटिव्ज़ की एनर्जी यूरोपियन नॉलेज को हासिल करने में लगेगी। इस तरह हमारे विरुद्ध आंदोलन नहीं जो होगा जो हमें नुकसान कर सके। [8]

इसी कारण कांग्रेस की स्थापना होते ही भारत में विचारधारा दो धाराओं में बंट गई। एक, जो अंग्रेजों की न्यायप्रियता की प्रशंसा करते हुए महारानी विक्टोरिया के लिए 'थ्री चीयर्स' करता, दूसरी वे जो देश के शत्रुओं को देश से बाहर करना चाहते थे। अंग्रेजों ने बड़ी ही सोची समझी रणनीति से काम किया, कांग्रेस की स्थापना करते समय उसमें मुस्लिम नेता न के बराबर रखे गए, जिसका फायदा भी अंग्रेजों को मिला। मुस्लिम नेता स्वयं को कांग्रेस से अलग मानते रहे, इसका परिणाम यह रहा कि वह अंग्रेजों को अपना मित्र और अन्य सभी को अपना शत्रु समझते समझने लगे। इतिहास भी 'अंग्रेजो की फूट डालो, शासन करो' की नीति का प्रमाण देते हैं- "सर सैयद अहमद खाँ जो भारतीय राष्ट्र और हिन्दू-मुस्लिम एकता के कट्टर समर्थक थे। कालांतर में वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के विरोधी और अंग्रेजी साम्राज्य के समर्थक बन गए।" [9] सन् 1857 ई० के विद्रोह में जहाँ हिंदू-मुसलमान सभी ने मिलकर संघर्ष किया, बाद में वे दो धाराओं में बंट गए। सर सैयद ने मेरठ में भाषण देते हुए कहा कि, "हिंदू और मुसलमान न केवल दो राष्ट्र हैं, अपितु विरोधी राष्ट्र हैं। यदि अंग्रेज भारत से चले जाएँ तो ये कभी भी एक साझा राजनीतिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकते।" [10] इस ऐतिहासिक प्रमाण से एक बात पुष्ट हो जाती है कि हिंदुओं-मुसलमानों में अंग्रेजों की कुटिल नीति के कारण अलगाव आ गया था। यही अलगाव फिर कभी भर नहीं पाया और देश के विभाजन की त्रासदी का सामना करना पड़ा।

अंग्रेजों की शासन नीति का आधार ही फूट डालो और शासन करो रही, इसका नतीजा बंगाल विभाजन के रूप में सामने आया। बंगाल में जन-जागरण भी सर्वप्रथम आया। कला, साहित्य, संगीत, विज्ञान आदि का केंद्र बंगाल ही रहा। बंगाल में सबसे अधिक शिक्षित-वर्ग का उदय हुआ, जो देश में राष्ट्रीय चेतना फैलाने के वाहक रहे। बंगाल का विभाजन प्रशासनिक ना होकर राजनीतिक अधिक था। बंगाल की जुझारू राष्ट्रीय चेतना पर काबू पाने के लिए बंगाल का विभाजन किया गया, जिसका प्रमाण इतिहास में भी हमें मिलता है। नाटककार ने लार्ड कर्जन के उसी वक्तव्य को नाटक में संवाद रूप में चित्रित किया है-

"कर्जन- बंगाल का पार्टिशन के जरिए ब्रिटिश गवर्नमेंट की यह कोशिश है कि कलकत्ते की इंपोर्टेन्स को कम करके बंगाली आबादी का बंटवारा किया जाए। इस तरह एक सेंटर फिनिश हो जाएगा, जहाँ से बंगाल और पूरे देश में कांग्रेस पार्टी की गाइडेंस होती है और अंग्रेज सरकार के खिलाफ शाजिशें रची जाती थी।" [11]

ऐतिहासिक तथ्य के अनुसार, "अंग्रेजी हुकूमत का यह प्रयास कलकत्ता को सिंहासन से च्युत करना था, बंगाली आबादी का बंटवारा करना था, एक ऐसे केंद्र को समाप्त करना था जहाँ से बंगाल एवं पूरे देश को कांग्रेस पार्टी का संचालन होता था, साजिशें रची जाती थीं" [12] बंगाल विभाजन का पूरे भारत में विरोध हुआ, भारतीय लोगों ने अनशन किया, प्रभात-फेरियाँ निकाली, इस पूरे घटना क्रम को नाटककार ने पूर्ण प्रामाणिकता के साथ नाटक में प्रस्तुत किया है। बंगाल विभाजन के विरुद्ध पूरे देश में स्वदेशी आंदोलन की अनुजूंज और 'वन्देमातरम' का जयघोष हुआ। बंकिमचंद चटर्जी ने ने गीत 'वंदे मातरम' ने देश की अखंडता, राष्ट्रीय चेतना, पारस्परिक एकता के भाव को संप्रेषित किया जिसने जन जागरण का कार्य किया। नाटक में 'वंदे मातरम्' घटना के माध्यम से नाटककार ने वंदे मातरम् के जय घोष को इंगित किया। देशवासियों के लिए 'वंदे मातरम्' स्वतंत्रता प्राप्ति का मूलमंत्र बन गया था, साथ ही इसके माध्यम से नाटककार ने राष्ट्रीय चेतना को भी उजागर किया है। नाटक में सिपाही के कथन के माध्यम से पाश्चात्य सभ्यता के अंधानुकरण पर व्यंग किया है, साथ ही यह दिखलाया है कि लोग विदेशी कपड़ा पहनकर और विदेशी नाम रखकर स्वयं को गौरवान्वित समझते हैं और अंग्रेजी सभ्यता के गुलाम होते जा रहे हैं-

"सिपाही- किधर भागते हो बच्चू! मेरे शिकंजे से बच पाना आसान नहीं है, मैंने अंग्रेज का नमक खाया है मैं जयकिशन नहीं जो मुझसे बच जाओ। मैं अब जैक्सन हूँ। जैक्सन मैंने मैनचेस्टर की वर्दी पहनी है। लिवर पूल का नमक खाया है। तुम बोले थे वंदे मातरम्।" [13]

बंगाल विभाजन के पश्चात् भड़के स्वदेशी आंदोलन और वंदेमातरम् से अग्रेजों को अपना सिंहासन हिलता नजर आया, इसके निदान के लिए उन्होंने हिन्दुओं-

मुसलमानों के बीच की खाई को और गहरा कर दिया। अंग्रेजों ने मुसलमानों के लिए अलग से प्रतिनिधि मंडल की स्थापना कर उन्हें प्राथमिकता देने का स्वांग रचाया। वायसराय मिंटो ने आगा खाँ की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधिमंडल बुलाया, जिसमें अधिक से अधिक मुसलमान नेताओं ने हिस्सा लिया जहाँ मुसलमानों ने अपनी मांगें राखी। देश में मुसलमानों ने स्वयं को एक पृथ्क कौम के रूप में देखा। इसी प परिणाम था कि देश में हिन्दू-मुसलिम एकता भाव समाप्त हो गया। अग्रेजों ने इस अलगाव को बनाए रखने के लिए सन् 1906 में 'मुस्लिम लीग' की स्थापना की। जिसमे देश में चल रही दो धाराओं नरम दल और गरम दल के साथ तीसरी धारा मुस्लिम अलगाववाद की धारा शामिल हो गई। इस प्रकार भारत के स्वतन्त्रता आंदोलन में अलग-अलग विचार धाराओं द्वंद्व भी चल रहा था। उसी समय गांधी जी दक्षिण अफ्रीका में भारतीय मूल के लोगो के लिए सत्याग्रह आंदोलन चला रहे थे। गांधी जी ने यह आंदोलन दक्षिण अफ्रीकी सरकार के कमीशन के विरूद्ध किया, उन्होंने अपने आंदोलन में अहिंसा और सत्य पर अधिक बल दिया। 'पाप से घृणा करो पापी से नहीं' के सिद्धांत को गांधीजी ने अपनाया। दक्षिण अफ्रीका में रेल रोड के गोरे कर्मचारियों ने हड़ताल कर दी, जिससे वहाँ की सरकार परेशान थी, तब गांधी जी ने अपने सत्याग्रह आंदोलन को वापस ले लिया। नाटक में इसका वर्णन नाटककार ने किया है-

"गाँधी- रेलरोड के गोरे कर्मचारियों की हड़ताल से साउथ अफ्रीका की सरकार भी परेशान है। इसलिए मैंने यह फैसला लिया है कि हम अपना सत्याग्रह का ऐलान वापस लेते हैं। विरोधियों को नष्ट करना, कष्ट पहुँचाना, नीचा दिखाना और उनके संकट से फायदा उठाना सत्याग्रही का धर्म नहीं है।" [14] इसके बाद दक्षिण अफ्रीका से गांधी जी भारत आ गए और भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की बागडोर संभाली तथा कांग्रेस पार्टी के कर्णधार बने। इसी समय जनरल डायर ने बेहद नृशंस और क्रूर कार्य किया। वैशाखी के दिन जलियांवाला बाग में हिंदू-मुस्लिम-सिक्ख सभी मिलकर सभा और देशभक्ति का त्यौहार मना रहे थे। सरकार ने उस समय रोलेट एक्ट कानून बनाया जिसमें सरकार जब चाहे जिसे चाहे गिरफ्तार कर सकती थी। इसके प्रति अदालत में कोई दलील और अपील भी नहीं मानी जाती थी। अंग्रेज सरकार डायर ने इस कानून से भी आगे जाकर शांति पूर्ण तरीके से सभा कर रही लोगों की भीड़ पर अंधाधुंध गोलियों की बौछार कर दी। इस घटना ने देशवासियों को झकझोर कर रख दिया, वास्तव में यह अंग्रेज सरकार की बर्बरता की चरम परिणीति थी। गांधी जी के स्वतंत्रता आंदोलन में आगमन से हिंदू-मुस्लिम एकता को बल दिया। खिलाफत आंदोलन के माध्यम से हिंदू-मुस्लिम एक मंच पर उपस्थित हुए। इसी समय गांधी जी ने असहयोग आंदोलन चलाया, जिसमें हिंदुओं और मुसलमानों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया, जिसमें गांधी जी ने पूर्ण स्वराज्य मिल जाने की बात कही। लेकिन अंग्रेजी सरकार ने सभी बड़े नेताओं मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, अब्दुल कलाम आजाद, लाला लाजपत राय, सुभाष चंद्र बोस आदि को गिरफ्तार कर लिया। तत्पश्चात् गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन का प्रारंभ किया, उन्होंने अपने सभी आंदोलनों में अहिंसा को ही अत्यधिक महत्व दिया। यही कारण है कि चौरा-चौरी तथा वारदोली की हिंसात्मक घटनाओं के बाद उन्होंने आंदोलन को वापस ले लिया। गांधी जी के आंदोलन के समानान्तर क्रांतिकारियों की धारा भी स्वाधीनता के संघर्ष में लगी हुई थी। कांग्रेस जहाँ अंग्रेज़ सरकार से डोमिनियन स्टेटस की बात कर रही थी, वहीं क्रांति धारा अपनी पूरी शक्ति के साथ अंग्रेजों को देश से बाहर निकालने में लगे थे और अपने प्राणों का बलिदान दे रहे थे। क्रांतिकारियों में राजेंद्रनाथ लाहिड़ी, राम प्रसाद बिस्मिल, अशफाकुल्ला खां, रोशन सिंह, भगत सिंह, बटुकेश्वर दत्त, चंदशेखर आजाद आदि प्रमुख थे। राम प्रसाद बिस्मिल, रोशन सिंह, और अशफाकुल्ला खां को काकोरी कांड में मृत्यु दंड दिया गया। 19 दिसंबर सन् 1927 के दिन इन तीनों को अलग-अलग स्थानों पर फांसी दी गई। जिसे देश में 'काले दिन' के रूप में याद किया जाता है। क्रांतिकारियों में भगत सिंह विशेष उल्लेखनीय हैं। भगत सिंह बटुकेश्वर दत्त ने 8 अप्रैल सन् 1929 को दिल्ली के केंद्रीय असेंबली में बम विस्फोट कर दिया, जिसका उद्देश्य किसी को नुकसान पहुँचाना नहीं था। क्रांतिकारी भगत सिंह का उद्देश्य था कि अंग्रेजी सरकार यह जान ले कि अब वे ज्यादा दिन भारत पर शासन नहीं कर सकेंगे। इस घटना से भारतीय जनता के अंदर एक नया उत्साह पैदा हुआ।

'इतिहास' नाटक में इस घटना को नाटककार ने पूरे प्रमाण के साथ प्रस्तुत किया है, उन्होंने कांग्रेस पार्टी में अध्यक्ष पद के लिए चल रही जोड़-तोड़ के भी पूर्ण साक्ष्य दिये हैं। काँग्रेस के अध्यक्ष मोतीलाल नेहरू बने, उसके पश्चात जवाहर लाल नेहरू को अध्यक्ष बनाया गया, जबकि अध्यक्ष पद के लिए वल्लभ भाई पटेल का नाम प्रस्तावित था। उन्हें बहुमत भी प्राप्त था लेकिन गांधीजी ने जवाहरलाल नेहरु को कांग्रेस अध्यक्ष घोषित किया। इतिहास ग्रन्थों में इस बात का समर्थन भी मिलता है कि वल्लभ भाई पटेल को पांच प्रांतीय समितियों का बहुमत प्राप्त था। इतिहास पुस्तकों में लिखा गया है कि, "विभाजक और विद्रोही शक्तियों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने में गांधीजी की कुशलता का उदाहरण इसी महीने देखने को मिला जब अधिकांश प्रांतीय कांग्रेस कमेटियों के विरोध और जवाहर लाल की पर्याप्त अनिच्छा के बावजूद उन्होंने जवाहरलाल नेहरू को ही आगामी कांग्रेस अधिवेशन का सभापति बनाए जाने पर बल दिया।" [15] नाटक में भी यह रेखांकित है कि मोतीलाल नेहरू के कारण गांधीजी ने जवाहरलाल नेहरु को कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया। ऐतिहासिक प्रमाणों से स्पष्ट हो जाता है कि गांधीजी ने अपूर्ण समर्थन होने पर भी जवाहरलाल नेहरु को अध्यक्ष बनाया। नाटक में मोतीलाल नेहरू का यह संवाद द्रष्टव्य है-

"मोतीलाल- प्रांतीय कांग्रेस कमेटियाँ कुछ भी चाहें। मैं तो यह जानता हूँ कि आप कांग्रेस हैं। आप चाहेंगे वही होगा। अगर कांग्रेस को आगे बढ़ना है तो यह जरूरी है कि उसकी जगह नौजवानों में हो। अगर जवाहर लाल को कांग्रेस प्रेजिडेंट बनाया जाता है तो करोड़ों नौजवान कांग्रेस में खिंचे चले आएँगे। जवाहरलाल नौजवानों का प्यारा है।" [16] काँग्रेस द्वारा चलाए जा रहे आंदोलनों को मुसलमानों ने साम्प्रदायिक दृष्टि से देखा और काँग्रेस को हिन्दू राज कायम करने वाली पार्टी कहा। सन् 1938 में 'मुस्लिम लीग' के अध्यक्ष चुने जाने पर अपना भाषण देते हुए जिन्ना ने कहा,- "कांग्रेस का आलाकमान दूसरे सभी समुदायों तथा संस्कृतियों को नष्ट करने तथा हिंदू राज कायम करने के लिए पूरी तरह दृढ़प्रतिज्ञ है। उनका (गाँधी जी) आदर्श है हिंदू धर्म को पुनर्जीवित करना तथा इस देश में हिंदू राज कायम करना।"(17) जिन्ना ने अपनी राजनीति के माध्यम से मुसलमानों के बीच घृणा और असुरक्षा का भाव भरा और यह प्रचार किया कि "कांग्रेस राष्ट्र की स्वाधीनता नहीं चाहती बल्कि वह ब्रिटिश सरकार से मिलकर हिंदू राज कायम करना, मुसलमानों पर हावी होना, यहाँ तक कि भारत में इस्लाम का नामोनिशान मिटा देना चाहती है।"(18) गांधी जी द्वारा चलाए 'नमक आंदोलन' में हजारों लोगों ने गिरफ्तारी दी और जेल गए। गांधीजी ने नमक कानून तोड़ा जिसके लिए उन्हें गिरफ़्तार किया गया लेकिन बाद में छोड़ दिया गया। ब्रिटिश सरकार द्वारा गांधी जी को वार्ता के लिए आमंत्रित किया गया, जहां गांधी और वायसराय इरविन के बीच समझौता हुआ। जिसमें गांधी जी ने गोलमेज सम्मेलन में जाना स्वीकार किया, सरकार ने सभी सत्याग्रहियों को छोड़ दिया। गांधी इरविन समझौते में कई बातों को उठाया गया, उन्होंने इस आंदोलन में असहयोग के आंदोलनकारियों को छोड़ने की बात तो कही किंतु भगत सिंह को बचाने के लिए प्रयत्न नहीं किए। पूरे देश को गांधी जी से उम्मीद थी कि इस समझौते में भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव की फाँसी को रोकने का प्रयास करेंगे, लेकिन ऐसा नहीं हुआ।

भारत के स्वतंत्रता संघर्ष में एक ऐसा नाम सुभाष चंद्र बोस जुड़ता है, जिन्होंने भारत को स्वतंत्र कराने के लिए सेना का गठन किया और लगातार अंग्रेजो के विरुद्ध संघर्ष करते रहे। सुभाष चंद्र बोस कांग्रेस के नेता के रूप में ही कार्यरत थे और कांग्रेस के अध्यक्ष भी बने, लेकिन बोस और गांधी के विचारों में मतभेद था। वे अंग्रेजो को भारत से उखाड़ फेंकने चाहते थे इसके विपरीत गांधी अंग्रेजों पर वैचारिक और नैतिक दबाव डालकर अंग्रेजों को यहाँ से जाने को मजबूर करना चाहते थे। गाँधी जी से यही मतभेद क्रांतिकारियों में भी रहा, भगत सिंह की फांसी के बाद यह मतभेद और भी बढ़ गया।

भारत के स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान ही द्वितीय विश्व-युद्ध का प्रारम्भ हो गया, जिसमें ब्रिटेन भी शामिल हो गया। इस युद्ध में गाँधी जी ने भारतीयों को अंग्रेजों का समर्थन

करने का प्रस्ताव पारित किया, किन्तु सुभाष चंद्र बोस ने इस बात का विरोध करते हुए कहा कि यही समय है कि जब हम अंग्रेजों पर दबाव बनाकर स्वतन्त्रता हासिल कर सकते हैं। इसी दौरान जिन्ना ने भी मुसलमानों के लिए अलग देश की माँग कर दी, जो बाद में भारत विभाजन का कारण बना। भारत से बाहर जाकर जापान में सुभाष चंद्र बोस ने 'भारतीय राष्ट्रीय सेना' का गठन किया तथा गाँधी जी ने सन् 1942 में 'भारत छोड़ो आंदोलन' की शुरुआत की।इसके बाद अँग्रेजी सरकार ने देश के सभी छोटे-बड़े नेता को गिरफ़्तार कर लिया। नेता विहीन जनता ने भी प्राणों की परवाह ण करते हुए 'करो या मरो' के नारे के साथ इस आंदोलन को जारी रखा। द्वितीय विश्व-युद्ध में इंग्लैंड को ज़बरदस्त आर्थिक क्षति हुई, उन्हें भारत को स्वतंत्र करने पर विचार करना पड़ा।

नाटककार के एडविना-माउण्टबेटन प्रसंग के माध्यम से यह दिखाया है कि अँग्रेजी सरकार ने किस प्रकार एक सोची-समझी रणनीति के तहत भारत विभाजन कर सांप्रदायिकता को बढ़ावा दिया। इसके लिए कूटनीतिक रूप से उन्होंने जवाहर लाल नेहरू का इस्तेमाल किया। नेहरू और एडविना के प्रेम-प्रसंग ने भारतीय इतिहास की दिशा बादल दी। नाटक में नेहरू-एडविना संवाद के माध्यम से यह बात उजागर की है-

"एडविना- अगर काँग्रेस पार्टीशन एक्सेप्ट कर ले और इंडिया के लिए डोमीनियन स्टेटस।

नेहरू- यह कैसे हो सकता है। मैं काँग्रेस का प्रेसिडेंट था, 26 जनवरी 1930 को हम सबने 'पूर्ण स्वराज' के लिए कसं खाई थी।

एडविना- माई डियरेस्ट जवाहर, चोयस तुम्हारे सामने है।चौदह महीने इंतज़ार करो। फिर यह भी नहीं कि चौदह महीने बाद पॉलिटिकल सिचुएशन हो। लेकिन अगर आज पार्टिशन और डोमिनियन स्टेटस एक्सेप्ट कर लो तो तीन-चार महीने में तुम प्राइम मिनिस्टर हो सकता है।

नेहरू- मैं तुम्हारी हर विश फुलफिल करना चाहता हूँ।

एडविना- तो बस ठीक है। तुम पार्टीशन और डोमिनयन स्टेटस इन-प्रिन्सिपल एक्सेप्ट कर लो। गांधी जी और बाकी काँग्रेसी लीडर को मनाना मेरी और डिंकी की ज़िम्मेदारी (हाथ बढ़ाते हुए) दिस इज़ अ डील।

नेहरू- (हाथ मिलाते हुए) जस्ट एज़ यू विश।" [19]

यह तथ्य है कि गाँधी जी समेत सभी काँग्रेस नेताओं द्वारा भारत विभाजन स्वीकार कर लिया गया, हालांकि इस विभाजन में मुस्लिम लीग के नेता जिन्ना का भी हाथ रहा जो अंत तक पाकिस्तान की माँग पर अड़े रहे। भारत बंट गया और नेहरू तथा जिन्ना दो देशों के अलग-अलग प्रधानमंत्री बने। इस विभाजन की बड़ी कीमत चुकानी पड़ी, विभाजन के बाद भड़के दंगों में अनगिनत लोग की बलि चढ़ी, लाखों लोग बेखर और अनाथ हो गए। इसका वर्णन भी नाटककार ने 'इतिहास' नाटक में किया है।

समग्रतः नाटककार दया प्रकाश सिन्हा के नाटक 'इतिहास' में कोई भी घटना या प्रसंग ऐतिहासिक संदर्भ से काटकर प्रस्तुत नहीं हुई है। इस नाटक को नाटककार ने 'वृत्त नाटक' कहा है, जिसका तात्पर्य है कि ऐसा नाटक जो तथ्यों पर आधारित हो। इस नाटक के माध्यम से जहाँ ऐतिहासिक सत्य को उद्घाटित करने का प्रयास है, वहीं भारत के स्वतन्त्रता आंदोलन, देशवासियों की राष्ट्रीय चेतना और देश-प्रेम की भावना को भी प्रस्तुत किया गया है। यह संदेश भी है कि विगत इतिहास में भारतीयों से जो गलतियाँ हुईं, उन्हें फिर से न दोहराया जाए।

संदर्भ ग्रर्थ

1. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, भूमिका से
2. नाटककार दयाप्रकाश सिन्हा- समीक्षायन, रवींद्रनाथ बहोरे, पृष्ठ 226
3. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा पृष्ठ-12
4. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष- विपिन चंद्रा, पृष्ठ-04
5. आधुनिक भारत- सुमित सरकार,पृष्ठ-66
6. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, पृष्ठ-14-15
7. आधुनिक भारत का इतिहास- बी०एल० ग्रोवर, यशपाल पृष्ठ- 417
8. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, पृष्ठ-20-21
9. आधुनिक भारत का इतिहास- बी० एल० ग्रोवर, यशपाल, पृष्ठ-597
10. वही, पृष्ठ 597
11. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, पृष्ठ-11
12. भारत का स्वाधीनता संग्राम, विपिन चन्द्र, पृष्ठ- 85
13. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, पृष्ठ-28
14. वही, पृष्ठ-41
15. भारत का स्वाधीनता संघर्ष- विपिन चंद्र, पृष्ठ- 303
16. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, पृष्ठ-50
17. भारत का स्वाधीनता संग्राम- विपिन चंद्र, पृष्ठ-349
18. वही
19. इतिहास- दया प्रकाश सिन्हा, पृष्ठ-74-75